

[2014] 2 एस. सी. आर 287

बाचू दास

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

(2014 की दांडिक अपील सं. 314)

03 फरवरी 2014

[पी. सतशिवम, भारत के मुख्य न्यायाधीश और रंजन गोगोई, न्यायमूर्ति]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 438-पूर्वानुमेय, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 438 - अग्रिम जमानत - एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3 और धारा 147, 148, 149, 323, 448/पीसी के तहत शिकायत - सत्र न्यायाधीश का आदेश कि शिकायत और जांच के दौरान परीक्षित गवाहों के बयान के अवलोकन पर, कथित अपराधों के तहत आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनता है - हालाँकि, उच्च न्यायालय द्वारा अग्रिम जमानत प्रदान की गई - शिकायतकर्ता की अपील पर, यह निर्णय दिया गया: धारा का दायरा। एससी/एसटी अधिनियम की धारा 18 और 438 के तहत अग्रिम जमानत देने में विशेष बाधा उत्पन्न होती है - जब किसी व्यक्ति के खिलाफ एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों के तहत अपराध दर्ज किया जाता है, तो कोई भी न्यायालय अग्रिम जमानत के लिए आवेदन पर विचार नहीं करेगी, जब तक कि वह प्रथम दृष्टया यह न पाए कि ऐसा कोई अपराध नहीं बनता है - सत्र न्यायाधीश के आदेश और वैधानिक प्रावधान के आलोक में, उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत देने में त्रुटि की है - अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 - धारा 3।

विलास पांडुरंग पवार एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य 2012 (7) धारा 795 - का अवलम्बन किया गया।

मामला कानून संदर्भः

2012(7) एस.सी.सी. 795

भरोसा किया

कंडिका 8

दांडिक अपील क्षेत्राधिकार: दांडिक अपील सं. 314/2014।

दांडिक विविध सं. 16213/2010 में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 05.05.2010 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलार्थी के लिए अनुज प्रकाश, समीर अली खान।

उत्तरदाताओं के लिए गोपाल सिंह, मनीष कुमार, रविशंकर कुमार, बी. के. चौधरी, नितिन कुमार ठाकुर।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया।

आदेश

1. सभी संबंधित पक्षों को सुना गया।
2. अनुमति दी गई।
3. उच्च न्यायालय के दिनांक 5 मई, 2010 के उस आदेश से व्यथित होकर, जिसमें उत्तरदाता सं. 2 से 8 (आरोपी सं.1 से 7) को अग्रिम जमानत दी गई थी, शिकायतकर्ता ने उपरोक्त अपील दायर की है।
4. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने संबंधित सामग्री, अर्थात् शिकायत, शिकायतकर्ता और चार गवाहों के बयान, साथ ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (संक्षेप में 'एससी/एसटी अधिनियम') के प्रासंगिक प्रावधानों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हुए दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा अग्रिम जमानत देना उचित नहीं है, विशेष रूप से, 28 नवंबर, 2008 को बिहार के छपरा स्थित सारण के सत्र न्यायाधीश द्वारा दिए गए तथ्यात्मक निष्कर्ष के आलोक में।
5. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अपीलकर्ता के दावे का समर्थन किया।
6. उत्तरदाताओं/अभियुक्तों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि

जिस दिन, अर्थात् 26 फरवरी, 2010 को उच्च न्यायालय ने इन व्यक्तियों को अग्रिम जमानत दी थी, तब से कोई अप्रिय घटना नहीं हुई और उन्होंने अन्वेषण अधिकारी के साथ सहयोग किया। उन्होंने हमारे संज्ञान में उच्च न्यायालय का 26 फरवरी, 2010 का पूर्व आदेश भी लाया, जिसमें उल्लेख किया गया था कि पक्षों के बीच गंभीर भूमि विवाद है और जाति के नाम से अभद्र भाषा का प्रयोग अस्वीकार्य है। इस आदेश का हवाला देते हुए, अभियुक्तों के अधिवक्ता ने दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. जैसा कि अपीलकर्ता/शिकायतकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने सही ही बताया है, दिनांक 28 नवंबर, 2008 के आदेश में, सारण, छपरा के विद्वान सत्र न्यायाधीश ने सभी सामग्रियों पर गौर करने के बाद, निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला है:

"बार में दिए गए तर्कों पर विचार करने, आक्षेपित आदेश और एलसीआर का अध्ययन करने और यह पाते हुए कि शिकायत याचिका, शिकायतकर्ता के बयान और जाँच के दौरान परीक्षित चार गवाहों के बयान के बाद विद्वान दंडाधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथम दृष्टया दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 147/148/149/323/448 और एस.सी. और एस.टी. अधिनियम की धारा 3 के तहत अपराध बनता है जो पूरी तरह से कानूनी, उचित और सही प्रतीत होता है। इस स्तर पर दंडाधिकारी को केवल यह देखना है कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं? मैंने अभिलेख पर रखी गई सामग्री का भी अवलोकन किया है और न्यायालय की राय है कि आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है जैसा कि विद्वान दंडाधिकारी ने पाया है और आरोपी व्यक्तियों को उचित रूप से समन किया गया है। परिणामस्वरूप, इस दांडिक पुनरीक्षण में कोई योग्यता नहीं पाते हुए इसे खारिज किया जाता है।"

8. यह स्पष्ट है कि विद्वान दंडाधिकारी ने शिकायत याचिका का ध्यानपूर्वक अध्ययन

किया, साथ ही शिकायतकर्ता और जाँच के दौरान परीक्षित चार गवाहों के बयानों का भी अध्ययन किया और आरोपियों के विरुद्ध प्रथम दृष्टया इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भ.दं.सं. की धारा 147, 148, 149, 323, 448 और एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3 के तहत अपराध बनता है। ऐसी परिस्थिति में और एससी/एसटी अधिनियम की धारा 18 के तहत प्रतिबंध को देखते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने {2012} 7 एससीसी 795 [*विलास पांडुरंग पवार एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य*] में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का हवाला देते हुए कहा कि उच्च न्यायालय द्वारा अग्रिम जमानत देना उचित नहीं है। इसी प्रकार की परिस्थिति में, इस न्यायालय ने धारा 3(1) के तहत अपराध और एससी/एसटी अधिनियम की धारा 18 के तहत दिए गए प्रतिबंध पर विचार किया और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला:

"एससी/एसटी अधिनियम की धारा 18 संहिता की धारा 438 के प्रयोग पर रोक लगाती है। हालाँकि, न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह शिकायत में दिए गए कथनों की पुष्टि करे और यह पता लगाए कि क्या एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3(1) के तहत प्रथम दृष्टया कोई अपराध बनता है। दूसरे शब्दों में, यदि शिकायत में कोई विशिष्ट कथन है, अर्थात् जातिसूचक नाम से पुकार कर अपमानित करने के इरादे से अपमान या धमकी, तो आरोपी व्यक्ति अग्रिम जमानत के हकदार नहीं हैं।

एससी/एसटी अधिनियम की धारा 18 और धारा 438 का दायरा ऐसा है कि यह अग्रिम जमानत देने में एक विशिष्ट बाधा उत्पन्न करता है। जब किसी व्यक्ति के विरुद्ध एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों के तहत कोई अपराध दर्ज किया जाता है, तो कोई भी न्यायालय अग्रिम जमानत के आवेदन पर तब तक विचार नहीं करेगी, जब तक कि उसे प्रथम दृष्टया यह न लगे कि ऐसा अपराध नहीं बनता। इसके अलावा, जमानत के आवेदन पर विचार करते समय, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और अन्य सामग्रियों के मूल्यांकन की गुंजाइश सीमित होती है। न्यायालय से अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का आलोचनात्मक विश्लेषण करने की अपेक्षा नहीं की जाती है। जब

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों की सुरक्षा के लिए विशेष अधिनियम में एक प्रावधान बनाया गया है और संहिता की धारा 438 के तहत ज़मानत देने पर रोक लगाई गई है, तो साक्ष्य पर विस्तृत चर्चा करके विशेष अधिनियम के प्रावधान को आसानी से नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है।

9. विद्वान सत्र न्यायाधीश, सारण, छपरा के दिनांक 28 नवंबर, 2008 के आदेश में दिए गए तथ्यात्मक विवरणों और उपरोक्त उद्धृत निर्णय में इस न्यायालय द्वारा व्याख्या किए गए वैधानिक प्रावधान के आलोक में, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि उच्च न्यायालय ने अग्रिम ज़मानत देने में त्रुटि की है। तदनुसार, उक्त आदेश को रद्द किया जाता है। उत्तरदाता सं. 2 से 8/अभियुक्तों को आज से चार सप्ताह का समय दिया जाता है कि वे उपयुक्त न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करें और नियमित ज़मानत की मांग करें।

10. यह स्पष्ट किया जाता है कि हमने उनके दावे के गुण-दोष पर विचार नहीं किया है और उत्तरदाता/अभियुक्तों को अपना पक्ष रखने की छूट है, जिसमें उनका यह दावा भी शामिल है कि अंतराल अवधि के दौरान, अर्थात् 26.02.2010, जिस दिन उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत दी थी और आज तक, उनके कहने पर कोई अप्रिय घटना नहीं घटी।

11. उपरोक्त टिप्पणी के साथ अपील स्वीकार की जाती है।

डी. जी

अपील की अनुमति दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।